1082

पहुनाई

लेखक
मानस तत्वान्वेषी
पं० श्री रामकुमार दासजी महाराज
संस्थापक श्रीराम ग्रंथागार
मणि पर्वत, श्री आयोध्याजी

प्रकाशक
पं० कपीन्द्र दास रामायणी
बड़ी छावनी, श्री अयोध्याजी

पहुनाई

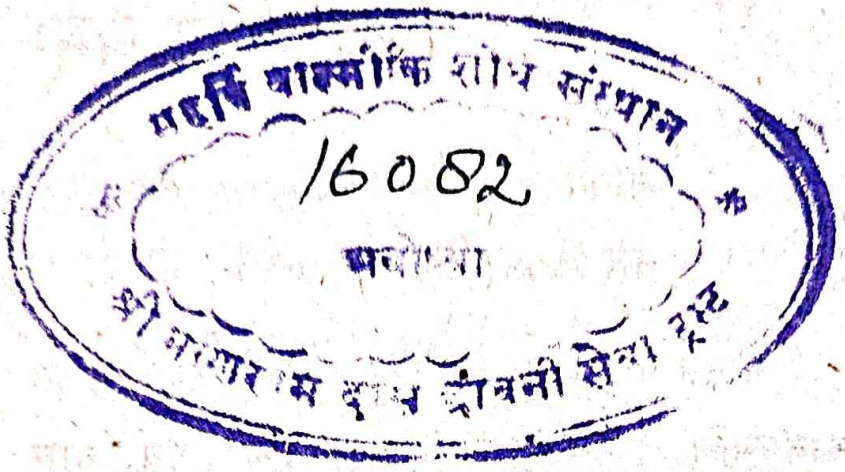

लेखक

मानस तत्वान्वेषी

पं० श्री राम कुमार दासजी महाराज

संस्थापक श्रीरामग्रंथागार

मणि पर्वत, श्री अयोध्याजी

प्रकाशक

पं० कपीन्द्र दास रामायणी

बड़ी छावनी, श्री अयोध्या जी

प्रथम संस्करण २०३८] [सेवा पुर्नमुद्रणार्थ २ रुपया

श्रियः श्रियै नमः

जाको चण्ड अखण्ड जश व्यापि रह्यो ब्रह्मंड।
सब जग की रक्षा करत सो वैष्णवी त्रिदण्ड॥

मानस पीयूष के आरम्भ काल से ही मैं लेख देता आया रहा। पीछे— मानसमणि "प्रेम सन्देश" "कल्याण" एवं नाम माहात्म्यादि सार्वजनिक तथा समन्वय "श्रेय, रामानन्द सन्देश" "विरक्त" एवं "विवेक रश्मि" आदिक अनेक साम्प्रदायिक पत्रों में मेरे लेख यदा-कदा छपते रहे। वे लेख कई सौ हैं। कई बड़ी पुस्तकें भी हैं। अब हाथ काँपने के कारण लिख नहीं पाता। कोई लिखने वाला पास रहता है तो कभी-कभी बोलकर नया लेख लिखा देता हूँ। अनेक प्रेमी मित्रों एवं शिष्यों के आग्रह से प्रकाशक मिलने पर उन्हीं लेखों को छोटी-छोटी पुस्तिका के रूप में दे देता हूँ। मेरे प्रिय छात्र पं० कपीन्द्र दास रामायणी "पहुनाई" प्रकाशन कर रहे हैं उन्हें मेरा आशीर्वाद है।

भगवद्भागवतानुचरः
पं० राम कुमार दासः

पहुनाई

नमो नमोऽस्तु कोशलेन्द्रराघवेन्द्रलालिते,
प्रभालये ! प्रभाकरप्रवंशकीर्तिपालिके ।
प्रमोदकाननेश्वरि प्रमोदमानमानसे,
प्रसीद रामबल्लभे ! प्रदेहि पादपल्लवम् ॥

गोस्वामी श्री तुलसीदास जी ने विनय पत्रिका में एक स्थान पर लिखा है, कि :—

जानत प्रीति रीति रघुराई ।
नाते सब हाते करि राखत राम सनेह सगाई ॥
घर गुरुगृह, प्रिय सदन, सासुरे, भइ जब पहुनाई ।
तब तब कहैं शबरी के फलन की रुचि-माधुरी न पाई ॥

यह "पहुनाई" वाला मनोरंजक इतिहास इस तरह है, कि श्री रघुनाथ जी के राज्यसिंहासनारूढ़ हो जाने के कुछ दिन पश्चात् एक दिन श्री कौशल्यादि माताओं के आग्रह से युवराज श्री लक्ष्मणकुमार ने अपनी दिनचर्या में से कुछ समय निकाल कर माताओं को चतुर्दश वर्षात्मक प्रवास-कालीन-इतिवृत्ति सुनाने के लिये नियत कर लिया, जिसमें माताओं की जिज्ञासा पूर्ण हो जाय कि हमारे बच्चे चौदह वर्ष का लम्बा समय बन में किस प्रकार व्यतीत किये होंगे ।

जिस समय आप बनचर्चा सुनाया करते उस समय तीनों माताएँ, गुरुपत्नी श्री अरुन्धती जी और श्री सुमन्त आदि मंत्रियों की स्त्रियाँ और नगर प्रमुख प्रौढ़ायें जो माता सरिस थीं श्री लक्ष्मणकुमार को घेर कर सामने की तरफ बैठा करतीं थीं, और पीछे की तरफ राजमहिषी श्री सीता महारानी के साथ उनकी मांडवी आदि भगिनियों तथा चारों भाइयों के बाल-सखाओं की पत्नियों की मंडली एक सूक्ष्म जवनिका की ओट देकर विराजा करती थीं ।

गंगा पार होने (केवट के कमनीय प्रसंग) से कथा प्रारम्भ हुई थी। कई दिनों के बाद जब मतंगाश्रम पहुँचने पर परमप्रेमा भक्तिमयी शबरी का प्रसंग आया, तो आप बड़े उल्लास से उसके सागपात फलादिकों के सरस स्वाद की प्रशंसा करने लगे, और प्रशंसा करते-करते तृप्त ही नहीं होते थे तो सभी को युवराज जी की बातों में अतिरंजना मालूम पड़ने लगी। पीछे पर्दे की ओट वाली पंक्ति से उच्चहास्य की तो नहीं किन्तु व्यंगात्मक मधुर मुसुकानयुक्त फुसफुसाहट की अस्पष्ट ध्वनि बड़ी बूढ़ियों से भी न छिप सकी। कई वृद्धाओं ने तो स्पष्ट ही कह दिया कि भला कहीं चक्रवर्ती नरेशों के महल से बढ़कर स्वादिष्ट पदार्थ एक वृद्धा भिलनी के फूस के झोपड़े में मिल सकता है? इसलिये बेटा! या तो तुम हास्य प्रिय होने से मजाक कर रहे होगे, अथवा यह तुम्हारी अर्थवादात्मक उक्ति होगी।

युवराज ने हाथ जोड़कर निवेदन किया, कि माता मेरी क्या सामर्थ्य जो आपके सामने किसी किस्म का मजाक कर सकूं। हाँ, आप सब न होतीं केवल पर्दे वाली ही मंडली होती तो वह सम्भव भी हो सकता था। शबरी की तो नहीं किन्तु अन्य कोल भीलों के प्रेम की एक झलक तो चित्रकूट में आप सबों को भी दिखाई पड़ गई थी।* और श्री महाराणी जी ने तो तेरह वर्ष तक अनुभव ही किया है। आज भी आपको वनवैभव नहीं भूलता और मुझसे तो कई बार प्रसंग पड़ने पर कह चुकीं कि वत्स! लषणलाल क्या दण्डकारण्य सरीखे एकदम ताजे-ताजे फल-फूलों का आनन्द महल के इन मेवों में आ सकता है? क्या उन भील कन्याओं की निष्टकपट तथा भोली-भाली बातों में जो आनन्द मिलता था, वह आनन्द इन नागरिकों के चातुर्यपूर्ण नपे-तुले वाक्य विन्यास में आ सकता है? हां आपको भी उन नेह भरी शबरी का दर्शन नहीं हुआ था।

---

*कोल किरात भील बनवासी। मधु, शुचि सुन्दर स्वाद सुधा सी॥
भरि भरि पर्ण पुटी रुचि रूरी। कंद मूल फल अंकुर जूरी॥
सबहिं देहि करि विनय प्रणामा। कहि कहि स्वाद भेद गुण नामा॥
नर नारि निदरहिं नेह निज सुनि कोल भिल्लनि की गिरा

—रामचरितमानस

मूल-फल ही क्या उस देवी के हाथ का वह पत्तों के दोने में लाया हुआ जल भी इतना अपूर्व स्वादवाला था, कि उसका वर्णन मेरी शक्ति के बाहर का विषय है किन्तु मेरी सीधी सी बात में भी जब आप सबों को अर्थवाद दिखायी पड़ता है, तो फिर भला जब कहीं शबरी के फलों की प्रशंसा बड़े सरकार के श्रीमुख से सुनेंगी, तब उसे क्या कहेंगी ? सरकार तो मेरी तरह आप सबके मुंह लगे भी नहीं हैं, वे तो हँसी-मजाक में भी अति रंजना की बातें नहीं करते, उन्हीं से पूँछ लीजिये, क्योंकि किष्किधा, लंका आदि जितने स्थानों में जहाँ कोई मिलता, उसमें एकाध बार तो अवश्य शबरी के फलों की चर्चा हो ही जाती थी :—

मुनिजन संग फिरत दण्डकवन सो चरचउ न चलाई।
बारहिं बार गीध शबरी की श्रीमुख करत बड़ाई॥
—विनय पत्रिका

यहाँ कनक भवन में चरचा है या नहीं मैं नहीं कह सकता। परन्तु दरबार में तो कभी-कभी उसकी चरचा चल ही जाती है, और तब-तब सरकार माता शबरी के फलों का स्मरण करके गद्‌गद और पुलकित हो जाया करते हैं।

आप सब के सामने अभी तक कोई ऐसा प्रसंग ही नहीं उपस्थित हुआ होगा नहीं तो सरकार के ही श्रीमुख से सुनने में आ गया होता। और अब तक आप लोगों को मालूम भी हो गया होता कि मेरा कथन कहाँ तक सत्य है और उसमें कितना अर्थवाद है। यदि आप लोग चाहें तो अब भी पूँछ सकती हैं।

युवराज श्री लक्ष्मणकुमार की इस तरह चलती-फिरती बातें सुनकर सारा रनिवास एक कौतूहल से भर उठा तथा एक नया आश्चर्य पैदा हो गया कि क्या धर्मधुरंधर महाराज श्रीराम जी उस अछूत भीलनी के हाथ का जल भी पिये होंगे ? ऐसा तो हो नहीं सकता। जल वाली बात अवश्य ही लक्ष्मणकुमार की परिहासोक्ति होगी परन्तु बात से तो सत्यता टपकती है, परिहास नहीं सूचित होता। अस्तु, आगे की कथा तब तक के लिए बन्द हो गई जब तक कि इसकी परीक्षा न हो जावे। यह सलाह सबको पसन्द आ गई और कथा बन्द

कर दी गई। अब महल में यह चरचा होने लगी कि शबरी की बात बड़े सरकार से पूंछे कौन ? अन्त में यह भार राजमाता श्री कौशल्या जी पर ही रहा।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब नित्य नियमानुसार महाराज श्रीरामजी माता जी को प्रणाम करने गये और प्रणाम करके माता के पास बैठकर कलेऊ करने लगे तब माता ने पूछा—बेटा ! आज हम लोगों को लषनलाल की कथा में एक नई बात मालूम हुई है, कि तुमने बन में जाकर जहाँ अनेकों लोकहित एवं धर्म के कार्य किये हैं। वहीं एक कार्य ऐसा भी कर दिया है, जिसे कि अनापत्ति में स्वेच्छापूर्वक द्विजाति क्या सत् शूद्र भी नहीं करना चाहते और तुम तो एक राजा हो, तुम्हारा आचरण तो सभी को अनुकरणीय है तुम्हारा तो—

'धर्म मार्गं चरित्रेण ज्ञान मार्गं च नामतः ॥'

(अथर्ववेद)

'यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदैवेतरे जनाः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवतते ॥'

(भगवद्गीता)

अस्तु, जो हो गया, अब उसका प्रायश्चित कर डालो। रघुनाथ जी ने काँपते हुये स्वर में प्रणतिपूर्वक जब अपने अपराधों की जिज्ञासा किया तो माता जी ने कहा कि पंपासर के पास मतंगआश्रम में किसी भिलनी ने तुम्हारा आतिथ्य किया था। तुमने उसका आतिथ्य ग्रहण करके कोई बुरा नहीं किया परन्तु वर्ण व्यवस्था के धर्म के प्रतिकूल अनापत्तिकाल में भी स्वेच्छा से उस वर्णबाह्या भिलनी* के हाथ का लाया हुआ जल भी पी लिया था।

भीलनी की चर्चा चलते ही श्री राघव सरकार के नेत्रों में जल भर आया। रोमांच हो उठा। कलेऊ से अकस्मात् ही हाथ खिच उठा। गद्गद् वाणी से कहा—'भैया लोक चाहे धर्म माने चाहे अधर्म। मैं आपके इन श्री चरणों की शपथ खाकर कहता हूँ कि उस कृपामयी माता शबरी के हाथ से अमनिया एवं

---

*जे बरनाधम तेलि कुम्हारा। स्वपच किरात कोल कलवारा ॥ (मानस)

छील-छीलकर मिलने वाले फलों में मुझे जो स्वाद मिला वह अपूर्व था और अब भी अपूर्व बना हुआ है। कदाचित् अभाव भी बना रह जाय। उतने स्वाद का सरस एवं मधुर रुचिकर भोजन मैंने आज तक नहीं किया। उसे आज हजारों वर्ष बीत गये। अब आगे तो भविष्य के गर्भ में है परन्तु आशा नहीं होती। मैया! उसके द्वारा पर्णकुटी में लाए हुये उस सद्यः विनिर्गत झरने के जल में उस दिन जो स्वाद आया, वह स्वाद ही कुछ ऐसा था कि कदाचित् वैसा मधुर स्वाद मेरे जीवन-वर्धक आपके दूध में भी न मिला हो। अस्तु, वह तो लड़कपन की बात थी। शायद स्मरण भी नहीं रहा हो, परन्तु उसके फलों और जल का माता कैसे वर्णन करूँ कि उसके रन्धन किये हुए कन्दादिकों की तो बात ही क्या है। उसके हाथों से सिद्ध किये हुये* सागपातों में कितना स्वाद था, कि वैसा मधुर स्वाद तो मुझे आज तक किन्हीं व्यंजनों में न आया। ऐसा कह आचमन करके आँख पोंछते-पोंछते उठकर बाहर चले गये।

माता जी तो ऐसा सुनकर अवाक् रह गईं। हृदय में आश्चर्य की सीमा न रही किन्तु लक्ष्मणकुमार की बातों की तरह रामभद्रजू की बातों में अतिरञ्जना न मालूम हुई। देर तक अनमनी-सी बैठी रहीं, कुछ कहा न गया। हृदय में दुःख होने लगा कि इस समय मैंने इस प्रसंग को नाहक छेड़ा। मेरा लाल बिना कलेऊ किये ही उठकर चला गया।

उस दिन अपराह्न की बैठक के समय जब अन्य नारियों ने राजमाता श्री कौशल्या जी से पूँछा, तो आपने कहा, कि बहनों! मैं अब तुम लोगों से क्या कहूँ, उसकी चर्चा करते ही उसकी स्मृति में बच्चा रोने लगा। कलेऊ भी न कर सका। नारियों को जितना आश्चर्य युवराज की बातों से नहीं हुआ था, उससे भी अधिक आश्चर्य बड़ी महारानी जू के वचनों से हुआ। सबों ने अपने-अपने घर अपने-अपने हाथ से नाना व्यंजनों को बनाकर श्री रामचन्द्रजू को निमन्त्रित करके भोजन कराया इसलिये कि इसके खा लेने पर रामभद्रजू को भिलनी शबरी के यहाँ का स्वाद भूल जायगा।

---

* बालक सुमित्रा कौशला के पाहुने फल साग के।
(गीतावली)

रघुनाथ जी सब माताओं के घर जा-जाकर भोजन किये परन्तु सब जगह यही कहे, कि माता जी आपके हाथ की रसोई तो ऐसी सुन्दर बनी है कि जिसकी उपमा नहीं मिलती है। किन्तु मैया शबरी के सागपात आदिकों में ही जैसा अपूर्व स्वाद आया था उस माधुरी का सतांश भी मिलने का सौभाग्य अभी तक नहीं प्राप्त हो सका।

यह बात सब जगह फैल गई कि बन में श्री महाराजजू ने किसी एक भिलनी के दिये हुए फल मूल सागपात आदि खाया था। कहते हैं कि वैसा स्वादिष्ट पदार्थ फिर नहीं मिला। तब से आज तक तरसते ही हैं। श्री महाराज के बाल-सखाओं में जो अत्यन्त मुँह लगे थे उनमें भी बीरमणी, धीरमणी-विक्रमशील भ्रमरमाली आदि सैकड़ों मित्रों की पत्नियों ने भी अपने-अपने घर आमन्त्रित किया। वहाँ-वहाँ भी आपने वही उत्तर दिया कि भाभी ! वह सुन्दर मधुर स्वाद तो स्यात् माता शबरी के साथ ही प्रस्थान कर गया। उस मधुर एवं सरस स्वाद की मधुर स्मृति ही रह गई है।

रघुकुल गुरु बशिष्ठ जी की पत्नी अरुन्धती देवी ने सोचा जब मैं अपने तपोबल से दूसरा ब्रह्माण्ड रच सकती हूँ, तो क्या मेरे हाथ के बने व्यञ्जनों में उस भिलनी के दिये हुए शाक फलों से बढ़कर स्वाद नहीं आ सकता ? माता श्री अरुन्धती जी के हाथ की ब्रह्मतेजात्मक तपोबल मिश्रित वह अनुपम ज्योनार खाकर महाराज श्री रामभद्रजू फड़क उठे और कहने लगे अहा ! आज बहुत दिनों के बाद आपके इन कृपामय श्री कर-कमलों का ऐसा अनुपम प्रसाद प्राप्त होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जब से समावर्त्तन संस्कार कराकर आपके इस आश्रम से गया तब से आज ही ऐसा स्वर्ण सुयोग प्राप्त हुआ कि इन श्री पूज्य चरणों की कृपा प्राप्त हुई। मैं अपने भाग्य की जहाँ तक प्रशसा करूँ थोड़ी है। परन्तु माता ! मैं अपराधी हूँ, श्रीपाद-पद्मों का अनन्य कृपाश्रित हूँ, सदैव की तरह आज भी अपराध क्षमा हो जावेंगे।

अपराध यह है, कि दण्डकारण्य में एक दयावती माता ने न मालूम कैसे शाक फल खिला दिया, कि तब से अभी तक वैसा मधुर एवं सरस रुचिकर

स्वादिष्ट भोजन मुझे मिला ही नहीं, कदाचित् पहले भी कभी नहीं मिला था। आज बड़ी आशा थी, परन्तु मेरे भाग्य दोष से इस चटोरी जिह्वा को उस रुचि माधुरी का अनुभव यहाँ भी न हो सका।

सम्पूर्ण महीमण्डल में यह बात व्याप्त हो गई, कि महाराज श्री अवधनरेश को बन में किसी भिलनी ने कुछ खिला दिया था, सो आज तक वैसा मधुर स्वादिष्ट पदार्थ सरकार को कहीं मिला ही नहीं। राज सम्बन्धियों को तो एक कुतूहल होने लगा, बहुतों ने तो सोचा कि भला चक्रवर्ती नरेश श्री राघवेन्द्र सरकार हम लोगों के घर वैसे काहे को आने लगे, अब एक अच्छा मौका हाथ लगा है, चलो इसी बहाने अपना घर पवित्र करा लें कि सरकार! सम्भवतः इस कंगाल की कुटिया में वैसा स्वादिष्ट भोजन मिल जाय, तो सरकार हमारे यहाँ अवश्य पधारेंगे, और हमें कृतार्थ करेंगे, और सरकार भी तो :—

'जानत प्रीति रीति रघुराई॥'

अतः जो ही बुलाता उसके घर जाकर :—

'प्रभु तिहि कै तसि तसि रुचि राखी॥'

परन्तु सब जगह वही कहावत चरितार्थ होती कि :—'वही रफ्तार बेढंगी, जो पहले थी सो अब भी है।'

'विश्व गुणादर्श' में जिन जनकपुर वासियों के लिये उद्घोषित किया गया है, कि :

'वाचि श्री माधुरीणां जनक जनपद स्थायिनीनां श्री कटाक्षे।' उन मैथिल सुन्दरियों ने जनक पाट महिषीं देवी श्री सुनयना जी के पास जाकर कोशिश किया कि जमाई सरकार को यहाँ बुलाया जाय। महारानी जू ने भी महाराज से प्रार्थना करने की स्वीकृति दे दिया।

समय पाकर जब महारानी जी ने श्री विदेह महाराज से प्रार्थना किया तो महाराज की भी राय हुई कि बहुत अच्छी बात है। लंका से लौट कर सिंहासनासीन होने के बाद पृथ्वी पर्यटन करते समय केवल दो-चार दिनों के

लिये ही रामलाल का विमान यहाँ ठहरा था। मैंने भी अवसर न रहने के कारण उस समय उन्हें विशेष काल तक ठहरने का आग्रह नहीं किया था। बहुत दिन भी हो गया और वे अब तो हर तरफ से शान्त हैं। यहाँ विशेष दिन ठहरने में किसी प्रकार की अड़चन भी नहीं है मैं कल ही कुमार को भेज दूँगा, लिवा लायेंगे। हजारों वर्षों से भेंट नहीं हुई मेरा भी चित्त लगा है। महारानी जी ने जब यह शुभ समाचार युवराज्ञी श्री सिद्धि कुँवरि को सुनाया तो बड़ी प्रसन्नता-पूर्वक ननदों को सौगात भेजने की तैयारी करने लगीं। समय पाकर युवराज्ञी ने युवराज श्री वीरध्वज (लक्ष्मीनीधि का प्रधान नाम) से आग्रहपूर्वक निवेदन किया कि अपने बहनोई के साथ उनके वनवासी मित्रों की भी एक टोली लाने का प्रयत्न कीजियेगा, क्योंकि जब कोशलेन्द्रजू के साथ असभ्य बानरों की जमात होगी, तो हास-परिहास में और जान आ जावेगी।

दूसरे दिन थोड़ी सी चतुरंगिणी सेना (अंगरक्षार्थ) साथ में लेकर युवराज श्री वीरध्वज जी ने श्री अयोध्या जी को प्रस्थान किया। संयोग से वैशाख की आमावस्या निकट थी, सोचा कि थोड़ा सा फेर पड़ेगा, तो क्या हर्ज है। व्याघ्रसर*(वक्सर) का उपेन्द्राभिषेक पर्व है। श्री गंगा जी स्नान करते चलें। 'एका क्रिया द्वयर्थकरी प्रसिद्धा'। ऐसा शुभ विचार उठते ही श्री मिथिलेश कुमार सीधा मार्ग छोड़ कर व्याघ्रसर पहुँचे। वहाँ पहुँचने पर मालूम हुआ, कि गुरुवर्य श्री विश्वामित्र के अपमान का बदला लेने के लिये कैवर्त्त (श्याम) नरेश शकुन्त को मारने महाराज श्रीराम भद्र जू सुदूर पूर्व श्याम गये थे; किन्तु श्री हनुमान् जी के कृपापात्र होने के कारण राजा शकुन्त को मारे नहीं। तब महर्षि विश्वामित्र ने भी उसे क्षमा कर दिया, तब महर्षि विश्वामित्र के साथ सदल बल श्री रामभद्र जू आकर यहीं सिद्धाश्रम पर ही ठहरे हुए हैं। युवराज श्री वीरध्वज जी को बड़ी प्रसन्नता हुई, यहीं से जल्दी ही जीजा जी को लिवा ले चलेंगे।

---

*व्याघ्रसर का अपभ्रंश वक्सर है, भोजपुर जिला (बिहार) में गंगातट पर है। इसी का नाम सिद्धाश्रम तथा कामाश्रम भी हैं। महर्षि विश्वामित्र का आश्रम भी यहीं हैं।

उतनी दूर अयोध्या न जाना पड़ेगा। वहाँ जाने से विशेष दिनों की रुकावट होना अनिवार्य ही है। महाराज के वस्त्रावास (तम्बू खीमे) के पास ही श्री मिथिलेशकुमार का वस्त्रावास सुमन्त्र ने सजवा दिया।

पर्व स्नान का मेला बीत जाने पर एक दिन अन्तरंग बैठक में युवराज ने श्री महाराज जू से प्रार्थना की कि श्री पिताजी आपको देखने को बहुत उत्कंठित हैं, और माता जी प्रायः उदास ही रहा करती हैं। अतएव पिता जी की उत्कट अभिलाषा है, कि आप अभी पधारें। मैं प्रार्थना को लेकर राजधानी जा रहा था। संयोगबश यहीं आप का दर्शन हो गया। अब आशा है, कि प्रातः यह समाज श्री मिथिला जी को प्रस्थान करेगा।

महाराज श्री रामभद्र जू ने हँसकर कहा भाई! मेरे यहीं से चलने में दो अड़चने हैं। युवाराज श्री वीरध्वज जी (आश्चर्य से) हैं। अड़चने कैसी? क्या अब भी अड़चनों से पिंड न छूटा?

महा० (हँसकर) सब से बढ़कर आपत्ति नित्य के उलाहनों की है।

युवराज—उलाहना कैसा?

महा०—घर लौट जाने पर बराबर यह उलाहना मिलता रहेगा कि किसी राजनैतिक चाल से भैया को वहीं से लौटा दिया गया है। हम लोगों से भेंट भी नहीं करने दिया।

युवा०—यह आपका बहाना है, हम इस बहकावे में जाने के नहीं।

महा०—खैर जैसा समझ लिया जाय; परन्तु जब माता जी जबाब तलब करेंगी, कि तुमने युवराज को वहीं से क्यों लौटाल दिया? तो क्या कहूँगा?

युवा०—यह तो मैं कहता ही नहीं कि मैं श्री अवध न जाऊँगा। मैं आपके साथ ही वहाँ से आऊँगा और माता जी से प्रार्थना लूंगा।

फिर तो आपसे बोलेंगी ही नहीं।

किष्किंधा नरेश बीच ही में बोल उठे, कि मैं श्री महाराणी जी से प्रार्थना कर दूंगा, जिससे वे सरकार से कुछ भी न बोलेंगी। लंकेश ने कहा भाई सुग्रीव!

आप यह कैसी अनर्थ योजना सोच रहे हैं। सन्मित्रों का तो दम्पति कलह को मिटा कर आपस में मेल करा देना है। यह नहीं कि परस्पर बोलचाल तक बन्द करा देना। भई-वाह मैत्री निवाहने का क्या खूब अच्छा मार्ग निकाला है। महाराज जी ने आप को रुमा से मिलाया। तो आप शिकायत करके बोलना तक बन्द करा देना चाहते हैं। कपीश जो ठहरे!

सुग्रीव ने कहा भाई साहब। आप मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं। मेरा तात्पर्य यह थोड़े ही है, कि मैं श्री महारानी जू से शिकायत कर दूंगा, कि सरकार मिथला में जाकर दूसरा विवाह कर लेंगे।

निषादराज ने कहा, यदि आप ऐसा ही कह दें तो श्री महारानी जी भला उसे कब मानेगी; क्योंकि :—

एक पत्नी धरो रामो राजर्षिः चरितब्रतः (भाग ६)

जाम्ववन्त जी ने कहा, कि हाँ यह तो ठीक ही है; किन्तु बहुत सुन्दर होना भी जी का जंजाल है। 'अति सर्वत्र वजयेत'॥ सरकार के मिथिला जाते ही यदि ऐसा प्रसंग उपस्थित हो गया तो फिर क्या होगा? अब तो हमारे सरकार स्वयं या अपने भाइयों के सहित एक पत्नीब्रत हैं; परन्तु हम लोग तो नहीं हैं।

विभीषण ने कहा जब आपकी रुचि यहीं से ऐसी खाम है, तो युवराज भी आपको मिथला ही क्यों जाने देंगे।

निषादराज ने कहा कि वहाँ जाने पर भी ऐसा प्रबन्ध कर दें कि आप मनमोदक से ही तृप्त होते रहें।

नील ने कहा, युवराज न सही बड़े सरकार (श्री विदेह जी) तो विचार करेंगे ही। धनुभग के बाद श्री रामभद्र जू के जितने बालसखा आये थे, वे सब यहाँ से सपत्नीक होकर गये थे। तो कपीश आदि तो श्री राघव जू के जवानी के एवं बिपत्ति के साथी हैं। इन लोगों को वैसे क्यों जाने दें?

जामवन्त ने कहा भाई मैं तो बूढ़ा हूँ, मेरे लिए तो सब द्वार बन्द हैं। क्या आशा करूँ?

बूढ़े जामवन्त की ऐसी रसिकता की बातें सुन कर किसी का दाँत भीतर न रह सका।

श्री महाराज ने युवराज से कहा भाई! तुम्हीं विचारो कि इन सुसभ्य बानरों को साथ लेकर कैसे चला जाय। यही तो दूसरी अड़चन है। क्योंकि एक तो तुम्हारी मिथिला वैसे ही बाल की खाल खींचने वाली हैं, उस पर जब ये लोग साथ रहेंगे, तो अवश्य ही पग-पग पर हँसी कराते रहेंगे। अतः अच्छा तो यही होगा, कि मेरे साथ-साथ तुम भी अयोध्या चले चलो। मैं इन लोगों को वहीं छोड़ दूंगा। तुम भी भेंट भेंटा लेना, तो मैं भी बड़े उलहने से बच जाऊँगा और यह दूसरी अड़चन भी छूट जावेगी। तब वहाँ से मैं आपके साथ-साथ चलता चलूंगा।

युवराज ने कहा, आपकी आज्ञा को कौन टाल सकता है। परन्तु न्याय से विचारिये तो आपको यहीं से चले चलना उचित है। कारण कि आप तो मेरे बुलाने का इस समय तो विचार ही नहीं किये थे और मैं आपको विदा कराने ही आया हूँ। आप इन बेचारे बानरों को क्यों त्यागना चाहते हैं? हमारे यहाँ के ऐसे फल फूल तो इन लोगों ने अन्यत्र कदाचित देखा भी न होगा। अतएव ये लोग कुछ समय वहाँ भी रहेंगे। आजकल तो अनेकों फलों की ऋतु भी है। देव! हलुवा (केला) तो सब दिन मिलता ही है। सामयिक फल लीची तूत, कटहल खिरनी आदि की बातें तो जाने दीजिये। संसार के मेवों के सरदार एक आम ही को लीजिये। इतने भेदोपभेद के आम सिवा मिथिला के अन्यत्र कहीं पैदा ही नहीं होते।

युवराज का इशारा पाकर बानरों ने भी हाथ जोड़कर प्रार्थना किया कि प्रभो! हम लोगों को भी साथ चलने की आज्ञा हो जावे। हम लोग श्री चरणों की आज्ञा-विरुद्ध कोई कार्य न करेंगे जिससे आप श्री की कुछ शिकायत हो सके चक्रवर्ती की ससुराल की पहुनाई कैसी होती है यह देखने की हम लोगों की उत्कट अभिलाषा है।

जामवन्त ने कहा कि सरकार आपकी ससुराल है तो क्या हम लोगों की

कुछ भी नहीं है। यदि हमें ले चलियेगा तो क्या कुँवर साहब श्री लक्ष्मीनिधि जी हम लोगों को भी एक-एक सौन्दर्यमयी निधि देकर युगल न कर देंगे ? श्रीमान् का स्वभाव तो ईर्षालु नहीं था अब ऐसा क्यों हो गया है। आप हमारी उन्नति नहीं देख सकते ? आपका एक पति व्रतत्व का आदर्श मनुष्यों में भले चल सकता हो परन्तु हमारे महाराज (श्री सुग्रीव जी) एवं पड़ोसी मित्र श्रीलंकेश जी तो आपके इस गुण को तो नहीं ही अपनाये हैं। और हमारे सेनाधिपति नील के दूसरे विवाह पर तो प्रसन्नतापूर्वक वरदान भी आपने दिया ही था। तब फिर भला एक पत्नी व्रतत्व का कानून हम लोगों पर कैसे चल सकता है ? श्री महाराज ने कहा कि सचमुच बूढ़ों की बुद्धि भी बूढ़ी हो जाती है। आमात्यवर मुझ पर तो आप नाहक आक्षेप करते हैं। भाई सुग्रीव और विभीषण तो कई दिनों से अपनी-अपनी राजधानी जाने के लिये तैयार हैं। यदि आप इन बानरों की जिम्मेदारी ले सकें तो कोई बात नही !

जामवन्त ने बानरों की ओर देखा तो सब बानर करबद्ध होकर कहने लगे कि हम लोग श्री ऋक्षेश जी की आज्ञा के विरुद्ध किंचित् भी चलें तो हमें कठिन से कठिन दण्ड दिया जाय। जैसा जामवन्त करेंगे और कहेंगे हम लोग वैसा ही करेंगे। लंका वाली नील की कोई बात न होने पावेगी हम लोग कहीं अकेले घूमने न जायेंगे।

अन्त में यह तय पाया गया कि विभीषण तो लंका जावें कारण कि मूलकासुर के साथी उपद्रव मचाये हुए हैं। उनका दमन आवश्यक है। और मित्रवर सुग्रीव किष्किन्धा जाकर राजा शकुन्त के कारण माता अञ्जनी यदि कुछ रूठ गई हों तो उन्हें प्रसन्न करके हनुमान जी को भेज दें। बिना आञ्जनेय के मंडली फीकी लगती है। और बाकी सब कोई मिथिला चलें। मिथिलेश कुमार ने कपीश से कहा कि यदि वीरवर हनुमान जी को ही हमारे यहाँ भेज दिया जाय तो जीजा साहब का मन जल्दी न उचटेगा।

सुग्रीव ने कहा—कुमार साहब ! हम लोग तो गये बीते हैं ही उस बिचारे पर तो दया कीजिये एक हनुमान पर ही तो हम अभिमान करते हैं कि राघव पत्नीव्रत हैं तो हमारे हनुमान बालब्रह्मचारी महाऊर्ध्वरेता हैं। वैसे यदि आपको

बानरों ही की आवश्यकता होगी तो जितना आप कहियेगा बानर लेकर आपकी सेवा में उपस्थित हूँगा। दूसरे दिन तो सुग्रीव और विभीषण दक्षिण को प्रस्थान किये, और कुछ दूतों को अयोध्या भेजकर सरकार श्री मिथिला जी को प्रस्थान कर दिये। कुँवर श्री वीरध्वज के साथ लाई हुई उपहार वस्तुएँ सुग्रीव और विभीषण को दे दी गई।

मिथिला पहुँचने पर शहर के बाहर महाराज का पड़ाव पड़ा, अब नित्य ही—'विविध भाँति होहिं पहुनाई ॥' परन्तु सरकार ने अपनी वही पुरानी रटी हुई बात यहाँ भी कही, कि यहाँ के सरस एवं मधुर पदार्थों का तो कहना ही क्या है; परन्तु :—

'मम जिह्वा रस सारज्ञा सर्वदा मधुर प्रिया।
शवरिका कर वन्मधुरं कदा कुत्र न जायते ॥'

प्रतिदिन लोग बानरों से छेड़खानी करके कुछ नया मजाक करना चाहते थे; किन्तु एक तो रामजी का दूसरे जामवन्त जी का कठोर शासन कोई बानर किसी से कभी न बोलता, न कहीं अकेले घूमने जाता।

जिस दिन बिदाई का भोज था, उस दिन युवराज्ञी सिद्धि देवी के आँगन में पङ्क्ति बैठी। एक तरफ अयोध्या के मनुष्य लोग, दूसरी तरफ बानर भालुओं की पंक्ति बैठी, बीच में पनवारे (पत्तल) परसे गये। युवराज्ञी जी की आज्ञा से किष्किन्धा वाली मण्डली के पत्तों पर जो कटहल के कोये परसे गये, उनमें से बीज न निकाले गए थे, नित्य की तरह उस दिन भी सब बानर भालुओं की दृष्टि जामवन्त पर ही लगी थी कि बड़े बूढ़े ऋक्षेश पहले ग्रास ग्रसन करैं, तो फिर और सब आरम्भ करें। सब कुछ परस जाने के बाद रघुनाथ जी पाँच कवल कर लिये तो जामवन्त ने कटहल का एक कोया उठाकर ज्योंही मुँह में देना चाहा; कि किञ्चित अँगुलियों का जोर पड़ जाने से कोये से सरककर बीज बहुत ऊपर उछल गया। बीज निकलते ही देरी न लगी कि जामवन्त ने ऊपर उछल कर उस बीज को लोक लिया। लोकने के साथ ही मुँह में भी रख लिया। बस फिर क्या था सब बानर भी वैसा ही करने लगे, कि कोये को अँगुली से दाबकर

उनके बीज को ऊपर उछालकर और कूद कर लोक कर मुँह में रख लेते। फिर दूसरा उछालते लोकते, मानो बानरों में होड़ लग गई, कि देखें कौन कितना उछालता है। अब आँगन में पूरी धमा चौकड़ी मच गई। अटारी पर की गारी गाने वाली युवतियों का वाद्य और गान आप ही बन्द हो गया। मुँह पर वस्त्र देकर सुन्दरियाँ हँसने लगीं। किसी चुलबुली नवयुवती ने तो यहाँ तक कह दिया, कि जमाई सरकार तो बहुत दिनों से इन मित्रों के साथ हैं, अवश्य ही इस दमदम नृत्य को सीखे होंगे। जरा हम लोगों को भी दिखा देते। देर तक जब बन्दरों की उछल कूद बन्द न हुई तो युवराज श्री लक्ष्मणकुमार के इशारे पर सुमन्त पुत्र अभिनन्दन ने बन्दरों को घुड़की बताई कि ऐसा उजड्डपन क्यों करते हो ? तब बन्दरों ने कूदना बन्द करके कहा कि इसमें उजड्डपना क्या और मनुष्यों के राजा महाराजा जिस समय ससुराल से विदा होने लगे, उस दिन पंगत से कटहल के बीज उछाल कर लोकने की कोई प्राचीन प्रथा है, तभी तो हमारे अग्रणी (नेता) सरकार के सम्मानित आमात्य ऋक्षराज जी ने ऐसा किया। भला बताइये तो इनके समान कोई वयोवृद्ध प्रथम मनवन्तर का आज वैवस्वत मनु की इस चौबीसवें त्रेता में कौन है ? जो रस्म-रिवाज हमारे जामवन्त बाबा को मालूम है, आप लोग क्या जाने ? अब तो एक और कुतूहल बढ़ गया। कुमार वीरध्वज ने पूछा कि ऋक्षेश जी कहिये तो भला यह किस जमाने की सभ्यता है ?

जामवन्त जी ने बड़ी नम्रतापूर्वक गम्भीर वाणी में कहना शुरू किया। उपस्थित सज्जनो ! आत्मश्लाघा की बातें नहीं कहता हूँ; किन्तु मौका पड़ गया है। बिना कहे काम नहीं चलता, देखकर कहना पड़ता है, कि चाक्षुषमन्वतर के अन्तिम त्रेता में जब हमारे सरकार का वामन अवतार हुआ था, उस समय मैं पूर्ण युवा था। उसे आज सौ युग के करीब व्यतीत हो गये। हाँ तो जब बामन भगवान ने अपने शरीर को बढ़ाया था। उस समय मैंने अपने कमर में नगारा बाँधकर बजाते हुये इनकी १०८ परिक्रमा किया था। सो भी केवल एक दिन

मैं* और इस बुढ़ापे में भी ये साथी लोग जानते हैं कि जिस इन्द्रजीत ने सबको बांध लिया, हमारे लक्ष्मणकुमार को मार ही डाला था, उस महाबली मेघनाद को मैंने एक ही त्रिशूल में मूर्छित कर दिया, और पाँव पकड़कर जो रण-भूमि से फेंका तो दशयोजन पर लंका ही में गिरा और रावण ऐसा बीर तो एकही लात के घात मे मूर्च्छित हो गया था।* ऐसी कितनी ही घटनाएँ मेरे पुरुषार्थ की लोगों में ख्यात है। आप सब मिथिला निवासी उपस्थित गण और इन सब महाशयिनी गणिकाओं ने भी कुछ सुना ही होगा, और इस समय यदि मेरा भक्षफल ही मेरे हाथ से छूटकर गिर जाता तो फिर भला आप महाशयों को मेरे पुरुषार्थ का विश्वास कैसे होता। हमारे बड़े सरकार की ये साली सरहजें महाशयिनी गणिकायें जो कि हमारे सरकार को नैन वाण से घायल करने की चेष्टा तो करती ही हैं। बैनवाण से छलनी ही कर डालतीं, कि ऐसे पुरुषार्थी

---

* जाम्बवानृक्ष राजस्तुं भेरी शब्दैर्मनोजवैः।
विजयंदिक्ष सर्वासु महोत्सवमद्योषयत्॥ (भाग ८।२१।८)

* जामवन्त कह खल रहु ठाढ़ा।
सुनि करि ताहि क्रोध अति बाढ़ा॥
बूढ़ जानि सठ छाँड़ेउँ तोहीं।
लागेसि अधम प्रचारै मोहीं॥
अस कहि तरल त्रिसूल चलायो।
जामवन्त कर गहि सो धायो॥
मारेसि मेघनाद की छाती।
परा धरनि घुर्मित सुर घाती॥
पुनि रिसान गहि चरन फिरावा।
महि पछारि निजब लहि दिखावा॥
वर प्रसाद सो मरै न मारा।
तव पद गहि लंका पर डारा॥
'उर लात घात प्रचण्ड लागत विकल रथ ते महि परा॥'
(रामचरितमानस लंकाकाण्ड)

आपके मित्र और मन्त्रीगण हैं, जो कि अपना भक्ष्य तक नहीं बचा सकते। जिनकी भोजन सामग्री तक हाथ से छूटकर दूसरे देश चली जाती है वे क्या कर सकते हैं। उनकी बहादुरी कोरी डींग मारना ही है। अतएव आपही बताइये, कि मैंने क्या बुरा किया, जो अपना भक्ष्य बचा लिया। अस्तु, चाहे न्याय से बोलिये चाहे नहीं। अपने राम अब तो भोजन करते हैं, फिर सब पुनः पूर्ववत् भोजन करने लगे। गारी गायी जाने लगी; परन्तु आज इन बुढ़ऊ जामवन्त की खूब खबर ली गई। क्योंकि इन्होंने ऐसे रसिकता के ढङ्ग से सब उपस्थित सुन्दरियों को गणिका कहकर मजाक उड़ाया, कि जिसका प्रतिवाद नहीं ही हो सका।

जमात भोजन विश्राम के बाद जब बिदा होने लगी तो कुछ बन्दरों की इच्छा मिथला में जाने की हुई, परन्तु लक्षमण जी ने साफ कह दिया कि जो बानर कभी भी इस मिथला के अन्तर्ही (टाउनहाल) में रहेगा उसकी कुशल नहीं।❀

समाज श्री अवध पहुँचा। कुमार श्री वीरध्वज भी साथ में जा कुछ दिन रहकर मिथिला वापस गये। अब यहाँ रोज ही शवरी की चर्चा होने लगी। युवराज श्री लक्षमणकुमार ने फिर पूर्ववत् कथा कहकर कुछ दिनों श्री भरद्वाज आश्रम पर पुष्पक से आने तक की कथा पूर्ण किया।

❀मेरा विद्यार्थी जीवन अधिकांशतः श्री मिथिला जी की गोद में ही बीता है। अतः मैंने वर्षों मिथिला में रहकर देखा है कि आज भी मिथिला जी की अन्ततर्ही की परिक्रमा की जो सड़क है उसके भीतर बानर नहीं रहते। सड़क, विद्याकूप आदि पर रहते हैं; पर भीतर नहीं आते। शायद कभी एकाध घन्टे के लिए सड़क पार भी चले गये तो भी रात नहीं बसते। यहाँ तक कि कोई जंजीर में बाँधकर रखना चाहते भी हैं, तो वह दो चार मास में पगलाकर मर जाता है। मैंने जब इस रहस्य के जानने की जिज्ञासा की तो श्री दशरथ तालाब पर रहने वाले क्यों बृद्ध महात्मा श्री सीतारामदास जी ने संक्षेप से लक्षमण श्राप सुनाया था। (लेखक)

एक दिन श्री कनक महल में श्री वशिष्ठ जी की पुत्रबधू आई थी। सरकार उन्हीं से शबरी के फलों की प्रशंसा कर रहे थे, कि महारानी जी की एक अन्तरङ्गा सखी (जो श्री विदेहराज के प्रधान मंत्री की कन्या होने से सरकार से गहरा मजाक भी कर बैठती थी) ने पूँछा, कि सरकार सच कहिये, मजाक मत समझिये, क्या हमारी किशोरी जी के हाथ के बने व्यञ्जनों में भी कभी उस स्वाद की झलक नहीं आती ? सरकार ने अपनी वही पुरानी तान छेड़ दी, कि भला अब उसकी आशा क्या सब जगह तो चटोरापन कर चुका। सखी ने कहा तभी आपको यहाँ भी वह स्वाद प्राप्त नहीं होता। शबरी अशिक्षिता एवं आप में वात्सल्य भाव रखने वाली थी। इसीलिये पहले सारे गंजसे चख लिया करती थी। अतः वह एक तरह से जूँठा हो जाता था, उसे खाने से आपकी रुचि स्त्रियों का उच्छिष्ठ खाने में प्रवृत्त हो गई, पर परन्तु हमारी श्री किशोरी जी पतिव्रता हैं। आपके भोजन करने के पहले गंज से चीखने का विचार भी नहीं करतीं। यदि वे कभी अपने अधरामृत का स्पष्ट भी उसे करा दें तो शबरी को भूलकर हमारे किशोरी जी का जूठन सचमुच ही खाया करें। आप स्वयं ही विचार कर लीजिये, कि उनके अधरामृत का स्वाद कैसा है ? सखी की बात पर सरकार बड़े लज्जित हुए, और सखियों की उस स्वच्छन्द हँसी से सारा महल गुञ्जायमान हो रहा। उस दिन से सरकार ने अन्तःपुर में कभी शवरी की चर्चा न की। परन्तु बाहर तो प्रसंग पड़ने पर कहा करते थे कि :—

'बहु अवतार धरेउ क्षिति माहीं।
मिला भोज्य शबरीवत् नाहीं॥

एक बार माता कौशल्या जी ने गुरु वशिष्ठ जी से पूछा कि महाराज जरा आप विद्यावल से बिचारिये, तो कि मेरे बच्चे को उस बुढ़िया शबरी ने कोई जादू टोना तो नहीं कर दिया ? जिससे उसे कहीं का भोजन नहीं रुचता। यदि

ऐसी बात हो तो कृपाकर कुछ यंत्र मंत्रादि कर दीजिये। जैसे उसके बालपन में कर दिया करते थे।*

श्री वशिष्ठ जी राजमाता को आवश्वासन देकर चले गये। अपने आश्रम पर जाकर कुछ किया या नहीं पर उस दिन से श्री रामचन्द्र जी ने माता जी के समक्ष कभी भी भोजन में अरुचि नहीं दिखलाई। माता जी ने समझ लिया कि श्री गुरुदेव जी के तंत्र-मंत्र के प्रभाव से श्री रामभद्र जी शबरी के प्रसंग को भूल गये।

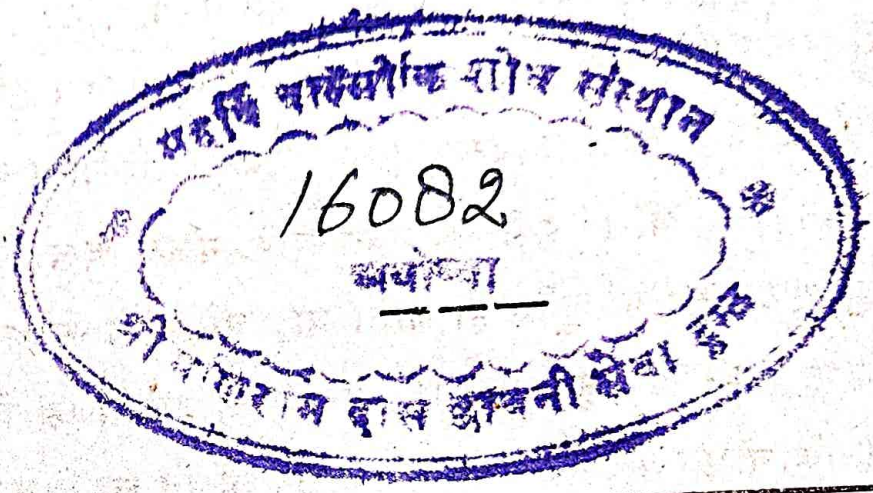

---

*जासु नाम सर्वस सदा शिव पार्वती के।
ताहि झरावहि कौशिला यह रीति प्रीति की हिय हुलसति तुलसी के॥
(गीतावली)

लेखक की प्रकाशित रचनायें

१—मानस पारायन पूजन पद्धति	अप्राप्य
२—प्रलापौषधि	,,
३—सार्थ राम तारक प्रयोग विधि	,,
४—मानस सिद्धान्त	,,
५—जानकी चरण चामर सरला	,,
६—धर्म रथ	,,
७—जानकी चरण चामर रजःप्रच्छालिनी	,,
८—वेदों में राम कथा	,,
९—सत्योपाख्यान् अनुवाद	,,
१०—वेदों में कृष्ण कथा	,,
११—मंगल पचीशी	,,
१२—सम्वाद बत्तीसी	४) रु०
१३—प्रेममयी मुद्रिका	अप्राप्य
१४—दो विभूतियाँ	४) रु०
१५—मानस शंका समाधान (बालकाण्ड)	४) रु०
१६—मनोहर चार	४) रु०
१७—मानस शंका समाधान (अयोध्याकाण्ड)	२.५०
१८—भक्ति का शृङ्गार	३) रु०
१९—जयी जटायू	३) रु०
२०—मानस में पुष्प वृष्टि	३) रु०
२१—भागवत् में राम परत्व	२) रु०
२२—पहुनाई	३) रु०
२३—वर की खोज	७५ पै०
२४—मानस में नारी दीक्षा और नारी निन्दा	२) रु०
२५—राम चरित के तीन क्षेपक	७५ पै०
२६—मानस में दो दान	२) रु०
२७—सीता गुण गान	५० पै०
२८—श्री राम स्वभाव	२) रु०
२९—राम रण क्रीड़ा	५० पै०
३०—तुलसी कृति का पाठ कैसा हो	२) रु०
३१—मानस के सपेरे	२५ पै०
३२—मानस चतुष्शती कुशमाञ्जली	१) रु०
३३—सखी गीता	१) रु०
३४—जननी शतक	

मुद्रक—माधो प्रिंटिंग वर्क्स, प्रयाग